RNI No. RAJHIN/2007/26996
ISSN 0976-7452 Raaso
Refreed Journal

रासो

अन्तर्विषयी त्रैमासिक शोध पत्रिका

वर्ष-18, अंक-3, जून जुलाई अगस्त 2025

रासो
त्रैमासिक शोध पत्रिका
2005
॥ स्वस्ति पन्थामनु चरेम॥

RNI No. RAJHIN/2007/26996
ISSN 0976-7452Raaso
Refreed Journal

रासो

इतिहास, संस्कृति, साहित्य एवं दर्शन की त्रैमासिक शोध पत्रिका

वर्ष-18 अंक - 3 जून-जुलाई-अगस्त-2025

सम्पादक
डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा

निदेशक
कॉम्पिटिशन प्लस संस्थान, ग्रुप ऑफ इन्स्टिट्यूशन्स, अजमेर (राजस्थान)

संरक्षक

* **प्रो. जे. पी. शर्मा** - पूर्व कुलपति, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राजस्थान)

सलाहकार मण्डल

* **प्रो. विभा उपाध्याय** - प्रोफेसर, इतिहास एवं भारतीय संस्कृति विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर (राज.)
* **नर्मदा प्रसाद उपाध्याय** - प्रसिद्ध साहित्यकार तथा संस्कृति चिंतक, इन्दौर (मध्य प्रदेश)
* **प्रो. टी.के. माथुर** - पूर्व अध्यक्ष, इतिहास विभाग महर्षि दयानन्द सरस्वती विश्वविद्यालय, अजमेर (राज.)
* **डॉ. रमेश अग्रवाल** - पूर्व स्थानीय सम्पादक, दैनिक भास्कर, अजमेर (राजस्थान)
* **डॉ. गौरव बिस्सा** - सहआचार्य, विभागाध्यक्ष, प्रबंध अध्ययन विभाग, राजकीय अभियांत्रिकी महाविद्यालय, बीकानेर (राज.)
* **डॉ. बीना शर्मा** - पूर्व विभागाध्यक्ष, हिन्दी विभाग, सावित्री कन्या महाविद्यालय, अजमेर
* **प्रो. शोभा आर. मिश्रा** - आचार्य एवं विभागाध्यक्ष, दर्शनशास्त्र विभाग, माधव महाविद्यालय, उज्जैन
* **डॉ. वेद प्रकाश विद्यार्थी** - पूर्व सहायक निदेशक, केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, नई दिल्ली।

☆ उप सम्पादक
डॉ. रीता पारीक
प्राचार्य
हुकुमचन्द नोबल इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस एण्ड टेक्नोलॉजी, अजमेर

☆ प्रबन्ध सम्पादक
डॉ. मृत्युंजय शर्मा
सह-आचार्य
हुकुमचन्द नोबल इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस एण्ड टेक्नोलॉजी, अजमेर

☆ सहायक सम्पादक
डॉ. निष्काम शर्मा

☆ शब्द संयोजन
मुकेश कुमार माहेश्वरी

☆ सम्पादकीय/सचिव
व्यवस्थापकीय कार्यालय
सृजन संस्थान,
आचमन, वेद विहार,
लोहाखान, अजमेर-06
दूरभाष : 0145-2426610
e-mail : rasoajmjournal@gmail.com

☆ प्रकाशक :
पुष्पा शर्मा
सृजन संस्थान,
द्वारा आचमन पब्लिकेशन्स,
अजमेर

☆ मुद्रक :
मैसर्स आर्य प्रिन्टर्स,
केसरगंज, अजमेर

☆ कम्प्यूटराइज्ड सेटिंग :
श्रीनिवास प्रिन्टोग्राफिक्स
132, पंचवटी कॉलोनी,
अजमेर

सहयोग दर

* वार्षिक सदस्यता - 500 रु. (चार अंक) संस्थाओं हेतु - 600 रु. (चार अंक)
कृपया चैक/ड्राफ्ट/मनीऑर्डर श्रीमती पुष्पा शर्मा, प्रकाशक, आचमन पब्लिकेशन्स, अजमेर- 305006 के नाम भेजें।

प्रकाशक-श्रीमती पुष्पा शर्मा, 51/1509, वेद विहार, लोहाखान, अजमेर द्वारा मैसर्स सृजन संस्थान, अजमेर की ओर से प्रकाशित एवं मुद्रक-श्रीमती उषा गर्ग द्वारा मैसर्स आर्य प्रिन्टर्स, केसरगंज, अजमेर से मुद्रित।

कौटिल्य की प्रशासनिक व्यवस्था की मीमांसा

डॉ. मुकेश शर्मा

विभागाध्यक्ष (समाज विज्ञान विभाग)

हुकुमचन्द नोबल इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस एण्ड टेक्नोलॉजी, अजमेर

कौटिल्य का 'अर्थशास्त्र' प्राचीन भारतीय राजनीतिक चिंतन में प्रशासन और प्रशासकीय विधि का सर्वाधिक व्यवस्थित एवं व्यावहारिक ग्रंथ माना जाता है। यह केवल राज्यशास्त्र का सैद्धांतिक विवेचन नहीं है, बल्कि शासन-प्रशासन के वास्तविक संचालन से जुड़ा हुआ एक मार्गदर्शक ग्रंथ है। इसमें राजा के गुण, कर्तव्य और शक्तियों के साथ-साथ प्रशासन के प्रत्येक अंग—केन्द्रीय शासन, प्रादेशिक प्रशासन, न्याय व्यवस्था, वित्त, सेना, गुप्तचर तंत्र और लोककल्याण—का सूक्ष्म विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है।

कौटिल्य ने प्रशासन के केन्द्र में राजा को स्थापित किया है। उनके अनुसार राजा सम्पूर्ण राज्य व्यवस्था की धुरी है और वही शासन की अंतिम सत्ता का स्रोत है। राजा न केवल शासक है, बल्कि प्रशासक भी है, जिसके हाथों में विधायी, कार्यकारी और न्यायिक शक्तियाँ निहित रहती हैं। कौटिल्य का यह दृष्टिकोण राज्य की एकात्मक और सशक्त सत्ता की अवधारणा को प्रकट करता है। वे यह मानते हैं कि यदि राजा योग्य, अनुशासित और लोकहित में कार्य करने वाला हो, तो राज्य में सुव्यवस्था, शांति और समृद्धि बनी रहती है।

हालाँकि कौटिल्य राजा को सर्वशक्तिमान मानते हैं, फिर भी वे उसे निरंकुश नहीं बनाते। 'अर्थशास्त्र' में स्पष्ट है कि राजा को सदैव धर्म, नीति और लोककल्याण के अनुसार शासन करना चाहिए। राजा का सुख प्रजा के सुख में और उसका हित प्रजा के हित में निहित है—यह सिद्धांत कौटिल्य के प्रशासनिक चिंतन का मूल आधार है। इस प्रकार राजा की सर्वोच्चता के बावजूद प्रशासन नैतिक उत्तरदायित्व से बँधा हुआ है।

कौटिल्य यह भी स्वीकार करते हैं कि अकेला राजा, चाहे वह कितना ही सक्षम क्यों न हो, विशाल साम्राज्य का सुचारू संचालन नहीं कर सकता। इसी कारण उन्होंने मंत्रिपरिषद और उच्च अधिकारियों की अनिवार्यता पर बल दिया है। मंत्रिपरिषद राजा को परामर्श देने वाली संस्था है, जो प्रशासनिक निर्णयों में सहायक भूमिका निभाती है। कौटिल्य मंत्रियों की नियुक्ति में योग्यता, निष्ठा, अनुभव और चरित्र को विशेष महत्व देते हैं, क्योंकि उनके अनुसार अयोग्य और भ्रष्ट मंत्री राज्य को भीतर से कमजोर कर सकते हैं।

प्रशासन को प्रभावी बनाने के लिए कौटिल्य ने एक केन्द्रीकृत एवं सुसंगठित प्रशासनिक संरचना का प्रतिपादन किया है। राज्य को विभिन्न विभागों में विभाजित किया गया है, जिनके लिए पृथक-पृथक अधिकारी नियुक्त होते हैं। प्रत्येक अधिकारी के कर्तव्यों, अधिकारों और उत्तरदायित्वों का स्पष्ट निर्धारण किया गया है, जिससे प्रशासन में अनुशासन और जवाबदेही बनी रहे। कौटिल्य का यह दृष्टिकोण आधुनिक नौकरशाही व्यवस्था की पूर्वपीठिका के रूप में देखा जा सकता है।

शोध-पत्र में उल्लिखित सन्दर्भ एवं विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी है, सम्पादक नहीं।

कौटिल्य की प्रशासनिक व्यवस्था की एक महत्वपूर्ण विशेषता उसका कठोर अनुशासन और नियंत्रण तंत्र है। अधिकारियों की गतिविधियों पर निगरानी रखने के लिए गुप्तचर व्यवस्था को अत्यंत सशक्त बनाया गया है। इससे भ्रष्टाचार, सत्ता के दुरुपयोग और प्रशासनिक शिथिलता पर अंकुश लगाया जा सके। साथ ही, दंड व्यवस्था को भी प्रशासन का आवश्यक अंग माना गया है, क्योंकि कौटिल्य के अनुसार दंड के अभाव में राज्य व्यवस्था अव्यवस्थित हो जाती है।

कौटिल्य की केन्द्रीयकृत प्रशासनिक व्यवस्था :

कौटिल्य एक सशक्त, सुव्यवस्थित और केन्द्रीयकृत शासन व्यवस्था के प्रबल समर्थक थे। उनके अनुसार राज्य की एकता, सुरक्षा और स्थायित्व तभी संभव है जब शासन का केन्द्र मजबूत हो और सभी प्रशासनिक इकाइयाँ एक सुसंगठित ढाँचे के अंतर्गत कार्य करें। इसी दृष्टिकोण के कारण कौटिल्य ने राजा को प्रशासन की सर्वोच्च सत्ता के रूप में स्थापित किया और उसे योग्य सलाहकारों तथा दक्ष अधिकारियों की सहायता से शासन चलाने का निर्देश दिया। राजा नीति-निर्धारण का प्रमुख होता है, जबकि उसके अधीन नियुक्त अधिकारी उन नीतियों को व्यवहार में रूपांतरित करते हैं।

प्राचीन भारतीय परंपरा में शासन के विभिन्न विभागों को 'तीर्थ' कहा गया है। महाभारत, रामायण तथा अन्य प्राचीन ग्रंथों में तीर्थों का उल्लेख मिलता है और इनकी संख्या अठारह मानी गई है। कौटिल्य ने भी इसी परंपरा को स्वीकार करते हुए प्रशासनिक विभागों को अठारह तीर्थों के रूप में संगठित किया, जिन्हें 'अष्टादश तीर्थ' कहा जाता है। इन तीर्थों के माध्यम से ही राज्य का समस्त प्रशासनिक तंत्र संचालित होता है। प्रत्येक तीर्थ के साथ एक विशिष्ट पदाधिकारी को संबद्ध किया गया है, जिससे प्रशासन में कार्य-विभाजन और उत्तरदायित्व की स्पष्टता बनी रहे।

कौटिल्य ने इन उच्च पदाधिकारियों को उनके कार्यों और दायित्वों के आधार पर तीन श्रेणियों में विभाजित किया और उनके लिए निश्चित वेतन व्यवस्था भी निर्धारित की। यह व्यवस्था इस बात को दर्शाती है कि कौटिल्य प्रशासन को केवल नैतिक या आदर्शवादी दृष्टि से नहीं देखते थे, बल्कि उसे व्यावहारिक और आर्थिक अनुशासन से युक्त करना चाहते थे। वेतन निर्धारण के माध्यम से अधिकारियों की सामाजिक स्थिति, उत्तरदायित्व और राज्य के प्रति उनकी निष्ठा को सुदृढ़ करने का प्रयास किया गया।

मंत्री :- मंत्री को कौटिल्य ने प्रशासन का सबसे महत्वपूर्ण स्तंभ माना है। मंत्री राजा का विश्वस्त सहयोगी होता है और शासन से संबंधित सभी महत्वपूर्ण निर्णयों में उसे परामर्श देता है। मंत्री को प्रशासनिक तंत्र का अविच्छेद्य अंग माना गया है, क्योंकि बिना सक्षम और निष्ठावान मंत्रियों के राजा प्रभावी शासन नहीं कर सकता।

पुरोहित :- पुरोहित को राज्य में एक विशिष्ट स्थान प्राप्त है। वह केवल धार्मिक अनुष्ठानों का कर्ता नहीं है, बल्कि धर्म और नीति के संदर्भ में राजा का मार्गदर्शक भी है। इससे स्पष्ट होता है कि कौटिल्य प्रशासन में नैतिक और धार्मिक मूल्यों की भूमिका को भी स्वीकार करते हैं।

युवराज :- युवराज की व्यवस्था कौटिल्य के व्यावहारिक दृष्टिकोण को विशेष रूप से उजागर करती है। उन्होंने उत्तराधिकार को केवल जन्म के आधार पर नहीं, बल्कि योग्यता, शिक्षा और गुणों के आधार पर निर्धारित करने की बात कही। अयोग्य या अशिक्षित पुत्र के स्थान पर योग्य राजपुत्र को युवराज

बनाना राज्यहित में आवश्यक माना गया है। इससे प्रशासनिक निरंतरता और राज्य की स्थिरता सुनिश्चित होती है।

राजमहल से जुड़े अधिकारी :- राजमहल से जुड़े अधिकारी जैसे दौवारिक और अन्तर्वेशिक राजा के दैनिक प्रशासनिक जीवन से प्रत्यक्ष रूप से जुड़े होते हैं। इनके माध्यम से राजा और प्रजा अथवा अधिकारियों के बीच संपर्क स्थापित होता है। राजा की अस्वस्थता की स्थिति में भी प्रशासनिक कार्य बाधित न हों, इसके लिए इन अधिकारियों को विशेष अधिकार दिए गए हैं।

प्रशास्ता, समाहर्त्ता और सन्निधाता जैसे पदाधिकारी राज्य की आंतरिक व्यवस्था और आर्थिक प्रशासन की रीढ़ हैं। प्रशास्ता दंड और शांति व्यवस्था का क्रियान्वयन करता है, जिससे कानून और व्यवस्था बनी रहती है। समाहर्त्ता राज्य की आय-व्यय व्यवस्था का प्रमुख अधिकारी है, जो कर संग्रह, लेखा-जोखा और आर्थिक निरीक्षण का दायित्व निभाता है। वहीं सन्निधाता राजकोष का संरक्षक है और विभिन्न कोषगृहों तथा भंडारों के माध्यम से राज्य की संपत्ति की सुरक्षा करता है। इन पदों से यह स्पष्ट होता है कि कौटिल्य ने वित्तीय प्रशासन को अत्यंत व्यवस्थित और नियंत्रित रूप में प्रस्तुत किया है।

प्रदेष्टा, नायक, पौर-व्यवहारिक और कार्मातिक जैसे अधिकारी प्रशासन के न्यायिक, सैनिक, नगर प्रशासन और औद्योगिक पक्ष को संभालते हैं। इससे प्रशासन की बहुआयामी संरचना सामने आती है, जिसमें प्रत्येक क्षेत्र के लिए विशेष दक्षता वाले अधिकारी नियुक्त किए जाते हैं। मंत्रिपरिषद् के अध्यक्ष की भूमिका वस्तुतः मुख्य कार्यपालक की होती है, जो राजा का निकटतम सहयोगी होकर प्रशासन के दैनिक संचालन में प्रमुख भूमिका निभाता है।

सीमाओं की सुरक्षा और राज्य की भौगोलिक स्थिरता के लिए अन्तपाल, दुर्गपाल और आटविक जैसे अधिकारियों की नियुक्ति की गई है। सीमावर्ती क्षेत्रों, दुर्गों और वनों की देखरेख से राज्य की सुरक्षा, संसाधनों का संरक्षण और आंतरिक शांति सुनिश्चित होती है। विशेष रूप से आटविक के पद पर वन क्षेत्रों का ज्ञान रखने वाले लोगों की नियुक्ति का निर्देश कौटिल्य की व्यावहारिक बुद्धि को दर्शाता है।

कौटिल्य के 'अर्थशास्त्र' के दूसरे अधिकरण में विभिन्न विभागों के अध्यक्षों का जो विस्तृत और व्यवस्थित वर्णन मिलता है, वह प्राचीन भारतीय प्रशासनिक चिंतन की पराकाष्ठा को प्रकट करता है। राजनीति विज्ञान के क्षेत्र में यह कौटिल्य की एक अद्वितीय और मौलिक देन मानी जाती है, क्योंकि इसमें राज्य के आर्थिक, औद्योगिक, वाणिज्यिक और सैन्य जीवन से जुड़े प्रत्येक क्षेत्र के लिए पृथक विभाग तथा उसके लिए उत्तरदायी अध्यक्ष की स्पष्ट व्यवस्था की गई है। इससे यह सिद्ध होता है कि कौटिल्य प्रशासन को एक वैज्ञानिक और संगठित प्रणाली के रूप में विकसित करना चाहते थे।

कोषाध्यक्ष :- कोष विभाग का अध्यक्ष कोषाध्यक्ष कहलाता है और उसे राज्य की आर्थिक व्यवस्था का प्रमुख स्तंभ माना गया है। कौटिल्य के अनुसार राजकोष का अत्यधिक महत्व है, क्योंकि राज्य के सभी कार्य—चाहे वे प्रशासनिक हों, सैनिक हों या लोककल्याण से संबंधित—कोष पर ही निर्भर करते हैं। कोषाध्यक्ष विशेषज्ञों और विश्वसनीय व्यक्तियों की सहमति से कोषगृह में राज्य की मुद्राएँ, रत्न तथा अन्य प्रकार की चल संपत्ति सुरक्षित रखता है। इससे यह स्पष्ट होता है कि कौटिल्य आर्थिक प्रशासन में पारदर्शिता, विशेषज्ञता और सामूहिक उत्तरदायित्व को महत्व देते थे।

सुवर्णाध्यक्ष :- सोने-चाँदी से संबंधित कार्यों की देखरेख के लिए सुवर्णाध्यक्ष की नियुक्ति की गई है। सुवर्णाध्यक्ष का दायित्व केवल धातुओं की शुद्धता की जाँच तक सीमित नहीं है, बल्कि वह अक्षशाला का निर्माण करवाकर वहाँ सोने-चाँदी के कार्य को सुव्यवस्थित ढंग से संचालित करता है। सर्राफ बाजार में चतुर, कुलीन, विश्वस्त और पारखी सर्राफों को बसाना भी उसी का कार्य है। इससे कौटिल्य की यह सोच स्पष्ट होती है कि आर्थिक गतिविधियाँ केवल नियंत्रण से नहीं, बल्कि योग्य और नैतिक व्यक्तियों की भागीदारी से ही सफल हो सकती हैं।

कोष्ठागाराध्यक्ष :- अनाज के भंडारण और प्रबंधन के लिए गठित विभाग का अध्यक्ष कोष्ठागाराध्यक्ष होता है। कौटिल्य ने इस पदाधिकारी के लिए अत्यंत विस्तृत ज्ञान की अपेक्षा की है। कोष्ठागाराध्यक्ष को विभिन्न प्रकार के धान्य, उनके संग्रह, संरक्षण और वितरण की विधियों का पूर्ण ज्ञान होना चाहिए। राजकीय कर के रूप में एकत्र किए गए धान्य को शुद्ध और पूर्ण रूप से ग्रहण करना, कूटे, साफ किए, पीसे, भूने, भीगे, सुखाए और पकाए गए धान्य का तुलवाकर निरीक्षण करना उसी का दायित्व है। इससे स्पष्ट है कि कौटिल्य खाद्य सुरक्षा और राजस्व दोनों को राज्य की स्थिरता के लिए अनिवार्य मानते थे।

पण्याध्यक्ष :- वस्तुओं के क्रय-विक्रय और बाजार व्यवस्था को नियंत्रित करने के लिए पण्याध्यक्ष की नियुक्ति की गई है। पण्याध्यक्ष का कार्य स्थल और जल मार्ग से आने वाली स्वदेशी तथा विदेशी वस्तुओं के व्यापार को सुव्यवस्थित करना है। वह बहुमूल्य और अल्प मूल्य वस्तुओं की उपलब्धता में संतुलन बनाए रखता है, ताकि प्रजा को किसी प्रकार का कष्ट न हो। यह व्यवस्था दर्शाती है कि कौटिल्य बाजार नियंत्रण को केवल राजस्व के साधन के रूप में नहीं, बल्कि जनहित और उपभोक्ता संरक्षण के दृष्टिकोण से भी देखते थे।

कुप्याध्यक्ष :- वन संपदा और उससे प्राप्त वस्तुओं की रक्षा एवं प्रबंधन के लिए कुप्याध्यक्ष की व्यवस्था की गई है। कुप्याध्यक्ष जंगलों के पास स्थित जनपदों और दुर्गों में लकड़ी से बनी वस्तुओं, सवारियों, बर्तनों तथा अन्य आवश्यक सामग्रियों का संग्रह करता है। उसका कार्य केवल संग्रह तक सीमित नहीं है, बल्कि नगर और जनपद की रक्षा तथा आजीविका के साधनों को सुरक्षित रखना भी उसका दायित्व है। इससे स्पष्ट होता है कि कौटिल्य प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण और उनके विवेकपूर्ण उपयोग के पक्षधर थे।

आयुधागाराध्यक्ष :- युद्धोपयोगी सामग्री के निर्माण और भंडारण के लिए आयुधागाराध्यक्ष का पद अत्यंत महत्वपूर्ण है। आयुधागाराध्यक्ष कारीगरों और शिल्पियों के माध्यम से हथियार, कवच और विभिन्न युद्ध यंत्रों का निर्माण करवाता है, जो दुर्गों की रक्षा और शत्रु के नगरों को ध्वस्त करने में सहायक हों। निर्मित सामग्री के सुरक्षित भंडारण की व्यवस्था करना भी उसी का उत्तरदायित्व है। इससे यह स्पष्ट होता है कि कौटिल्य सैन्य तैयारी को राज्य की सुरक्षा का आधार मानते थे।

पौतवाध्यक्ष :- माप-तौल की शुद्धता बनाए रखने के लिए पौतवाध्यक्ष की नियुक्ति की गई है। पौतवाध्यक्ष शास्त्रानुसार तराजू, बाट, द्रोण आदि बनवाता है और उनका नियमित निरीक्षण करता है। प्रत्येक चौथे मास इन साधनों की जाँच का निर्देश देकर कौटिल्य ने यह सुनिश्चित किया कि व्यापार में किसी प्रकार की धोखाधड़ी न हो और आर्थिक न्याय बना रहे।

शुल्काध्यक्ष :- शुल्क या चुंगी से संबंधित विभाग का अध्यक्ष शुल्काध्यक्ष होता है। शुल्काध्यक्ष

माल पर चुंगी लगाता है, व्यापार को नियंत्रित करता है और शुल्कशालाओं के निर्माण की व्यवस्था करता है। शुल्कशाला के प्रधान द्वार पर पहचान के लिए पताका लगाने का निर्देश इस बात का संकेत है कि कौटिल्य प्रशासनिक पारदर्शिता और स्पष्टता को महत्व देते थे।

कौटिल्य ने 'अर्थशास्त्र' में प्रशासन को अत्यंत सूक्ष्म, व्यापक और व्यावहारिक रूप में प्रस्तुत किया है। दूसरे अधिकरण में विभिन्न आर्थिक, सामाजिक और सुरक्षा-संबंधी विभागों के साथ-साथ उनके अध्यक्षों की योग्यता, नियुक्ति, कार्य और अधिकारों का जो विशद विवेचन मिलता है, वह प्राचीन भारतीय प्रशासनिक चिंतन को एक उच्च स्तर पर स्थापित करता है। सूत-व्यवसाय, आबकारी, पशु-वध, वेश्यावृत्ति और नौकायन जैसे विषयों पर पृथक विभागों की स्थापना यह सिद्ध करती है कि कौटिल्य ने राज्य को केवल राजनीतिक सत्ता नहीं, बल्कि एक सुव्यवस्थित सामाजिक-आर्थिक संस्था के रूप में देखा।

सूत्राध्यक्ष :- सूत-व्यवसाय से संबंधित विभाग का अध्यक्ष सूत्राध्यक्ष होता है। उसके अधीन वस्त्र-निर्माण, सूत कातने, बुनाई और उससे जुड़े श्रमिकों की व्यवस्था आती है। यह विभाग राज्य की औद्योगिक गतिविधियों का प्रतिनिधित्व करता है।

सुराध्यक्ष :- आबकारी विभाग का अध्यक्ष सुराध्यक्ष कहलाता है, जो मदिरा निर्माण, विक्रय और उस पर नियंत्रण का कार्य करता है। सुराध्यक्ष का दायित्व केवल राजस्व संग्रह तक सीमित नहीं है, बल्कि मद्यपान से उत्पन्न सामाजिक अव्यवस्थाओं पर नियंत्रण रखना भी उसका उत्तरदायित्व है।

सूनाध्यक्ष :- पशुओं के वध की व्यवस्था देखने वाले विभाग का अध्यक्ष सूनाध्यक्ष होता है। यह विभाग राज्य में मांस उत्पादन, पशु-वध की मर्यादा और नियमों के पालन को सुनिश्चित करता है।

गणिकाध्यक्ष :- वेश्याओं की निगरानी के लिए गणिकाध्यक्ष की नियुक्ति की गई है। गणिकाध्यक्ष वेश्यावृत्ति को पूरी तरह प्रतिबंधित करने के बजाय उसे राज्य के नियंत्रण में रखने का पक्षधर है, ताकि सामाजिक अव्यवस्था, अपराध और शोषण को रोका जा सके। इससे कौटिल्य का यथार्थवादी और नियंत्रित नैतिक दृष्टिकोण स्पष्ट होता है।

नावाध्यक्ष :- नौका विभाग का अध्यक्ष नावाध्यक्ष होता है, जो नदी, झील और जलमार्गों से जुड़े परिवहन, व्यापार और सुरक्षा की व्यवस्था करता है। यह विभाग जल-परिवहन को सुव्यवस्थित कर व्यापार और संचार को बढ़ावा देता है।

कौटिल्य ने पशुधन को राज्य की आर्थिक शक्ति का महत्वपूर्ण आधार माना है। इसी कारण उन्होंने पशुओं की देखभाल के लिए अनेक पृथक विभागों की स्थापना का सुझाव दिया। गोअध्यक्ष गाय, बैल और भैंस जैसे उपयोगी पशुओं के संरक्षण और कल्याण के लिए उत्तरदायी होता है। अश्वाध्यक्ष घोड़ों की रक्षा, पालन-पोषण और प्रशिक्षण का कार्य करता है, जो सेना और संचार व्यवस्था के लिए अत्यंत आवश्यक है। हस्त्यध्यक्ष हाथियों, हथिनियों और उनके बच्चों की देखभाल करता है। हाथी उस समय युद्ध और राजकीय प्रतिष्ठा का प्रतीक माने जाते थे, इसलिए उनके लिए अलग विभाग का गठन कौटिल्य की दूरदर्शिता को दर्शाता है।

राज्य की आंतरिक सुरक्षा और नियंत्रण व्यवस्था के अंतर्गत कौटिल्य ने मुद्रा विभाग और चारागाह विभाग गठित करने की भी सलाह दी है। मुद्रा विभाग का प्रधान मुद्राध्यक्ष होता है, जो जनपद में आने-जाने

वाले प्रत्येक व्यक्ति को राजकीय मुहर लगा हुआ पासपोर्ट प्रदान करता है। यह व्यवस्था आधुनिक पासपोर्ट प्रणाली की प्राचीन झलक प्रस्तुत करती है। पासपोर्ट के बदले एक निश्चित कर वसूलना भी मुद्राध्यक्ष का दायित्व है, जिससे राज्य को राजस्व प्राप्त होता है और बाहरी व्यक्तियों पर नियंत्रण भी बना रहता है। चारागाह विभाग का प्रधान विवीताध्यक्ष होता है। विवीताध्यक्ष का कार्य यह सुनिश्चित करना है कि कोई भी व्यक्ति बिना पासपोर्ट या जाली पासपोर्ट लेकर जंगलों के रास्ते गुप्त रूप से यात्रा न करे। ऐसे व्यक्तियों को गिरफ्तार करना उसका अधिकार है। इससे यह स्पष्ट होता है कि कौटिल्य सीमा-सुरक्षा और आंतरिक निगरानी को प्रशासन का अनिवार्य अंग मानते थे।

विभागों के सुव्यवस्थित संचालन के लिए कौटिल्य ने अध्यक्ष के अधीन लेखक, रूपदर्शक, संख्यायक और उत्तराध्यक्ष जैसे सहायक अधिकारियों की व्यवस्था की है। इससे प्रशासनिक कार्यों में विशेषज्ञता, लेखा-जोखा और उत्तरदायित्व की स्पष्टता बनी रहती है। यह व्यवस्था एक विकसित नौकरशाही ढाँचे का संकेत देती है।

अर्थशास्त्र के दूसरे अधिकरण के नौवें अध्याय में कौटिल्य ने अधिकारियों की नियुक्ति के सिद्धांतों पर विस्तार से प्रकाश डाला है। उनके अनुसार राज्य सेवा के लिए कर्तव्यपरायण, त्यागी, राजभक्त, ईमानदार और सच्चरित्र व्यक्तियों का चयन किया जाना चाहिए। उन्होंने नियुक्ति में सत्त्व, प्रज्ञा और वाक्शक्ति जैसे गुणों को प्राथमिकता देने का निर्देश दिया है। उच्च पदस्थ कर्मचारियों को अमात्य के गुणों से युक्त होना चाहिए और उनकी नियुक्ति केवल योग्यता और कार्यक्षमता के आधार पर होनी चाहिए, न कि जन्म या पक्षपात के आधार पर।

कौटिल्य ने कुछ विशेष प्रकार के व्यक्तियों को सरकारी पदों के लिए सर्वथा अयोग्य बताया है। भूलहर वह है जो अपनी वंशानुगत संपत्ति का अन्यायपूर्ण उपयोग करता है, तादात्विक वह है जो जितना कमाता है उतना ही व्यय कर देता है, और कदर्य वह है जो स्वयं और अपने सेवकों को कष्ट देकर धन संग्रह करता है। ऐसे व्यक्तियों को राज्य सेवा से दूर रखने का निर्देश कौटिल्य की नैतिक और आर्थिक दूरदृष्टि को दर्शाता है।

अधिकारियों की नियुक्ति के बाद भी कौटिल्य उनकी निरंतर निगरानी पर बल देते हैं। उनका मत है कि मनुष्य की वृत्तियाँ स्थिर नहीं रहतीं, इसलिए समय-समय पर अधिकारियों के आचरण की जाँच आवश्यक है। इसके लिए उन्होंने गुप्तचरों और बाह्य एजेंसियों के माध्यम से धर्मोपाय, अर्थोपाय, कामोपाय और भयोपाय— इन चार उपायों द्वारा परीक्षण की व्यवस्था की है। राजा और रानी को इस प्रकार के प्रत्यक्ष निरीक्षण से दूर रहने की सलाह दी गई है, ताकि शासन की गरिमा बनी रहे। यद्यपि इन विधियों की व्यावहारिकता पर कुछ विद्वानों ने संदेह भी प्रकट किया है, फिर भी यह स्पष्ट है कि कौटिल्य प्रशासनिक शुद्धता और राज्यहित की रक्षा के लिए किसी भी स्तर तक सतर्कता आवश्यक मानते थे।

कौटिल्य ने 'अर्थशास्त्र' के पाँचवें अधिकरण के तीसरे अध्याय में वेतन व्यवस्था और प्रशासनिक शुचिता पर जिस विस्तार और व्यावहारिकता के साथ विचार किया है, वह उनकी प्रशासनिक दूरदृष्टि को स्पष्ट रूप से उजागर करता है। उन्होंने न केवल उच्च अधिकारियों, बल्कि छोटे-छोटे कर्मचारियों के वेतन का भी सूक्ष्म निर्धारण किया है। कौटिल्य का मूल उद्देश्य यह था कि राजकर्मचारियों को इतना पर्याप्त वेतन दिया जाए जिससे उनके कार्य-उत्साह में कभी कमी न आए और वे लोभ या अभाव के कारण राजद्रोह

अथवा भ्रष्टाचार की ओर प्रवृत्त न हों। इसी दृष्टि से उन्होंने वेतन मद में राज्य की कुल आय का एक-चौथाई भाग व्यय करने का निर्देश दिया है, जो राज्य के प्रति कर्मचारियों की निष्ठा बनाए रखने का एक सशक्त उपाय माना जा सकता है।

कौटिल्य ने वेतन की न्यूनतम और अधिकतम सीमा भी निश्चित की है। उनके अनुसार कर्मचारियों को कम से कम साठ पण और अधिक से अधिक अड़तालीस हजार पण वार्षिक वेतन दिया जाना चाहिए। 'पण' उस समय चाँदी का प्रचलित सिक्का था, जिसे आधुनिक अर्थ में रुपये के समकक्ष माना जा सकता है। कौटिल्य ने पण की धात्विक संरचना का भी उल्लेख किया है, जिससे यह स्पष्ट होता है कि वे मुद्रा व्यवस्था में भी पारदर्शिता और मानकीकरण के पक्षधर थे। इस प्रकार वेतन निर्धारण को उन्होंने केवल संख्या तक सीमित न रखकर आर्थिक यथार्थ से जोड़ा।

वेतन व्यवस्था के साथ-साथ कौटिल्य ने राजकर्मचारियों के सामाजिक संरक्षण की भी स्पष्ट रूप से वकालत की है। यदि किसी कर्मचारी की सेवा के दौरान मृत्यु हो जाती है, तो उसका वेतन उसके पुत्र या पत्नी को दिए जाने का निर्देश उन्होंने दिया है। इसके अतिरिक्त मृत कर्मचारियों के बच्चों, वृद्धों और बीमार परिजनों पर राजा को विशेष कृपा दृष्टि बनाए रखने की सलाह दी गई है। उनके घरों में मृत्यु, बीमारी या संतान जन्म जैसी परिस्थितियों में आर्थिक और मौखिक सहायता प्रदान करना राजा का कर्तव्य बताया गया है। इससे स्पष्ट होता है कि कौटिल्य प्रशासन को केवल कठोर दंड और अनुशासन का माध्यम नहीं मानते थे, बल्कि उसे मानवीय संवेदना से युक्त व्यवस्था के रूप में देखते थे।

कौटिल्य ने प्रशासन में भ्रष्टाचार की रोकथाम के लिए भी विस्तृत उपाय सुझाए हैं। उनके अनुसार पदाधिकारियों और कर्मचारियों के भ्रष्ट आचरण की सूचना गुप्तचरों के माध्यम से प्राप्त की जानी चाहिए। सूचना मिलने पर राजा एक जाँच समिति का गठन कर सकता है, जो आरोपों की निष्पक्ष जाँच करे। भ्रष्टाचार की सूचना देने वालों को प्रोत्साहित करने के लिए कौटिल्य ने यह निर्देश दिया है कि सूचना देने वाले व्यक्ति को अपहृत धन का षष्ठांश पुरस्कार स्वरूप दिया जाए। यह व्यवस्था भ्रष्टाचार के विरुद्ध सामाजिक सहभागिता को बढ़ावा देने का प्रयास प्रतीत होती है।

भ्रष्टाचार पर नियंत्रण के लिए कौटिल्य ने समय-समय पर कर्मचारियों के स्थानांतरण की भी सलाह दी है, ताकि वे किसी एक स्थान पर अत्यधिक प्रभावशाली न हो सकें। इसके साथ ही उन्होंने भ्रष्ट अधिकारियों और कर्मचारियों को कठोर दंड देने का भी समर्थन किया है। जो कर्मचारी अपहृत धन से समृद्ध पाए जाते हैं, उन्हें पद से हटाकर उनकी संपत्ति जब्त करने का प्रावधान किया गया है। गंभीर अपराधों, जैसे रत्नों की चोरी या कुलीन परिवार की बंदी स्त्री के साथ दुराचार करने वाले जेलर के लिए प्राणदंड तक की व्यवस्था का उल्लेख मिलता है। इससे स्पष्ट होता है कि कौटिल्य भ्रष्टाचार और नैतिक पतन को राज्य के लिए अत्यंत घातक मानते थे।

भ्रष्टाचार के विरुद्ध जन-जागरूकता और सामाजिक निंदा को भी कौटिल्य ने एक प्रभावी उपाय माना है। उन्होंने सुझाव दिया है कि भ्रष्ट कर्मचारियों के मुँह पर गोबर और शरण लगाकर नगर और गाँव में उनके कुकर्मों की उद्घोषणा करते हुए घुमाया जाए, या उनका मुंडन करवा कर पीटते हुए राज्य से बाहर निकाल दिया जाए। यह दंड न केवल अपराधी को दंडित करने का साधन था, बल्कि अन्य कर्मचारियों के लिए चेतावनी भी था।

समग्र रूप से कौटिल्य का 'अर्थशास्त्र' एक सुव्यवस्थित, केन्द्रीयकृत और व्यावहारिक प्रशासनिक व्यवस्था का आदर्श प्रस्तुत करता है। उन्होंने प्रशासन को केवल सत्ता संचालन का साधन नहीं, बल्कि राज्य की एकता, सुरक्षा, आर्थिक समृद्धि और लोककल्याण का आधार माना। विभिन्न विभागों, उनके अध्यक्षों, अधिकारियों और कर्मचारियों की स्पष्ट संरचना, कार्य-विभाजन और उत्तरदायित्व निर्धारण से यह स्पष्ट होता है कि कौटिल्य एक संगठित नौकरशाही के समर्थक थे। पर्याप्त वेतन, सामाजिक सुरक्षा, योग्यता-आधारित नियुक्ति और सतत निगरानी के माध्यम से उन्होंने कर्मचारियों की निष्ठा और कार्यकुशलता बनाए रखने का प्रयास किया। साथ ही भ्रष्टाचार के विरुद्ध कठोर दंड और नैतिक नियंत्रण की व्यवस्था यह दर्शाती है कि कौटिल्य प्रशासनिक शुचिता को राज्य के अस्तित्व के लिए अनिवार्य मानते थे। इस प्रकार उनका प्रशासनिक चिंतन व्यावहारिकता, अनुशासन और लोकहित के संतुलन पर आधारित होकर आज भी प्रासंगिक प्रतीत होता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. *कौटिल्य, अर्थशास्त्र, सम्पा. व अनुवादक–आर. श्यामशास्त्री, मैसूर गवर्नमेंट ओरिएंटल लाइब्रेरी, मैसूर, 1909*
2. *कौटिल्य, अर्थशास्त्र, हिन्दी अनुवाद–उपेंद्रनाथ घोषाल, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, 2002*
3. *R. Shamasastry (Trans.), Kautilya's Arthashastra, Government Press, Bangalore, 1915*
4. *R. P. Kangle, The Kautiliya Arthasastra, Vol. I-III (Text, Translation & Study), Motilal Banarsidass, Delhi, 1960-1965*
5. *जयशंकर मिश्र, प्राचीन भारतीय राजनीति एवं प्रशासन, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, 1998*
6. *रामशरण शर्मा, प्राचीन भारत में राज्य और शासन, ओरिएंट लॉन्गमैन, दिल्ली, 1996*
7. *ए. एल. बाशम, भारत का सांस्कृतिक इतिहास, हिन्दी अनुवाद–लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2001*
8. *D. D. Kosambi, An Introduction to the Study of Indian History, Popular Prakashan, Bombay, 1975*
9. *यू. एन. घोषाल, प्राचीन भारत में राजनीतिक विचार, हिन्दी अनुवाद–राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2004*
10. *K. P. Jayaswal, Hindu Polity, Central Book Depot, Allahabad, 1955*
11. *बी. एन. लुनिया, प्राचीन भारतीय राजनीतिक विचार, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर, 1992*
12. *H. C. Raychaudhuri, Political History of Ancient India, Oxford University Press, Calcutta, 1953*
13. *राधाकुमुद मुखर्जी, प्राचीन भारत की राजनीतिक संस्थाएँ, हिन्दी अनुवाद–राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 1999*
14. *Max Weber, The Theory of Social and Economic Organization, Oxford University Press, London, 1947*
15. *रोमिला थापर, प्राचीन भारतीय सामाजिक इतिहास, ओरिएंट ब्लैकस्वान, नई दिल्ली, 2003*